ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-3* Issue-3*April- 2018
Innovation The Research Concept

स्वातंत्र्योत्तर कथा साहित्य में नारी

सारांश

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कथा साहित्य में महिलाओं में अस्तित्व के प्रति जागरुकता, सामाजिक अराजकता, नैतिक उच्छृंखलता, खोखलापन, अनास्था, निराशा एवं कुण्ठा, घृणा, नवीन मूल्यों का चित्रण हुआ। परम्परागत सामाजिक मूल्यों को नकारते हुए युगीन उपन्यासों में भारतीय जीवन में आधुनिकीकरण के परिवर्तित परिवेश से परस्पर मानवीय सम्बन्धों के विघटित रूप को चित्रित किया है। स्वतन्त्रता के बाद कथा साहित्यकारों ने नारी के व्यक्तित्व निर्माण में मूल प्रवृत्तियों के महत्व को स्वीकारते हुए उनकी स्वच्छंद अभिव्यक्ति में बाधक सामाजिक मान्यताओं की संगतता, असंगतता पर विचार किया है। रूढ़िवादी परम्पराओं के प्रति विरोध और आक्रोश उत्पन्न किया है। कथा साहित्यकारों का लेखन नारी जगत को बेहतर बनाने का प्रशंसनीय प्रयास है।

मुख्य शब्द : स्वातंत्र्योत्तर, कथा साहित्य, नारी।

उनिता
शोध छात्रा,
हिन्दी विभाग,
गर्वमेन्ट गर्ल्स कालेज,
————————————.

प्रस्तावना

नारी ने हमारी संस्कृति, धर्म एवं सभ्यता के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। नारी आदिम संस्कृति का उद्गम स्थल है। नारी पुरुष की प्रेरणा है और पुरुष संघर्ष का प्रतीक है। प्रेरणा और संघर्ष का समन्वय ही पूर्ण जीवन है। नर व नारी सृष्टि के दो मूलभूत तत्व हैं। नर–नारी की पूरकता और नारी की श्रेष्ठता को प्रतिपादित करते हुए महात्मा गांधी ने कहा है, ''स्त्री को अबला कहना उसका अपमान है। यदि शक्ति का अभिप्राय पाश्विक शक्ति से है, तो स्त्री सचमुच पुरुष की अपेक्षा कम शक्तिशाली है। यदि शक्ति का मतलब नैतिक शक्ति से है तो स्त्री, पुरुष से कहीं अधिक शक्तिमान है।''[1]

नारी शब्द का प्रयोग कथा साहित्य में आज खुलकर होता है। नारी शब्द हिन्दी और विशेष रूप से कथा साहित्य में पूरी तरह से रूढ़ हो चुका है और विस्थापित भी।

नारी का सभ्यता और संस्कृति के प्रारंभिक काल में गौरवमय स्थान था। नारी को प्रारंभ में मातृसत्ताक होने के कारण सर्चोच्च स्थान था। वैदिक काल में नारी शिक्षित व स्वतन्त्र थी और सभी कार्यों में उसका सहभाग था। नारी को समाज में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त था। नारी की उत्तर वैदिक काल में अवनति आरंभ हुई। नारी का स्थान घर तक सीमित होने लगा और वह पुरुष के अधीन होने लगी। नारी की स्थिति में उपनिषद व सूत्रकाल तक आते–आते और गिरावट आयी। नारी महाकाव्य काल तक देवी और दानवी रूप में विभाजित हो गई। नारी की स्थिति में बीच के कुछ वर्षों में जैन और बौद्ध काल में कुछ सुधार अवश्य हुआ, लेकिन वह अस्थायी रहा। नारी मध्यकाल में मुस्लिम आक्रमणों के कारण चारदीवारी में कैद रह गयी। नारी सुरक्षा के नाम पर इतने अधिक बंधनों से जकड़ दिया कि उसके स्वतन्त्र अस्तित्व का नामो–निशान न रहा। मध्यकालीन साहित्य में संत कवि कबीर ने कहीं नारी को माया का प्रतिरूप माना है, तो कहीं स्वयं को भी स्त्री मानकर अनेक साधनात्मक प्रतीकों द्वारा प्रेम को व्याख्ति किया है।

मध्यकाल में स्त्रियों की स्थिति दयनीय थी तथा स्त्री को दोयम दर्जे की नागरिक माना जाता था, जो पुरुष के अधीन थी। रीतिकालीन कवियों ने नारी के मांसल सौन्दर्य का ही चित्रण किया है। उन्होंने नख–शिख चित्रण पर बल दिया।

भारतेन्दु ने उन्हें विलास के लाल भुजों से बाहर लाकर लोक जीवन के राजपथ पर लाकर खड़ा कर दिया। शताब्दियों की दासता के बाद नारी का पुनरूत्थान आधुनिक काल में हुआ। इसका कारण रहा, आधुनिक काल में समाज सुधारकों की भूमिका। ''समाज सुधारकों की वजह से स्त्री जागरुक हुई और अपने अस्तित्व व व्यक्तित्व को मुखर करने के लिये सामाजिक पारम्परिक संकीर्णताओं से विद्रोह कर घर से बाहर आयी।''[2]

अध्ययन का उद्देश्य

हिन्दी कथा साहित्य में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद महिला लेखिकाओं का अत्यधिक संख्या में एकाएक उभर कर आना इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि साहित्य सृजन के लिये संवेज्ञ मनोगुण, नारी की बौद्धिक क्षमता को रेखांकित करता है। साथ–साफ यह भी स्पष्ट करता है कि नारी स्वयं को पुरुष के समकक्ष सृजन के क्षेत्र में भी स्थापित करने में सफल हो सकती है। कथा सृजन में नारी संवेदना विशेष अर्थ रखती है।

उपकल्पना

प्रस्तावित शोध–विषय में स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद नारी की परिस्थितियों का चित्रणा करते हुए कथा साहित्य में नारी जीवन में आये परिवर्तन और प्रभावों का सम्यक मूल्यांकन करना तथा नारी विमर्श को सकारात्मक और सृजनधर्मी दिशा को उन्नमुख एवं प्रतिस्थापित करने की परिकल्पना की गई है।

शोध प्रविधि

प्रस्तावित शोधपत्र की अध्ययन विधि मुख्य रूप से व्याख्यात्मक एवं विवेचनात्मक है, जिसमें उक्त साहित्य से सम्बद्ध प्रकाशित प्रसंशित रचनाओं तथा पत्र–पत्रिकाओं, इन्टरनेट आदि माध्यमों को भी प्रयोग में लाया गया है।

स्वातंत्र्योत्तर कथा साहित्य में नारी

स्वतन्त्रता से पूर्व स्त्री उद्धार की बात नारी संहिता के चौखटे में ही रही, बाहर निकलने का द्वार नहीं था, किन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय समाज में स्त्री की स्थिति में व्यापक बदलाव आया। यह नारी नवजागरण का दूसरा चरण है। 'हिन्दू कोड बिल' से भारतीय नारी आर्थिक, सामाजिक और नैतिक पक्षपातों से मुक्त हुई और उसने अपने अधिकारों के प्रति सजग होकर संघर्ष किया। स्वतन्त्रता संग्राम ने नारी सार्वजनिक क्षेत्र में जाने के लिये बाध्य किया। सामाजिक दृष्टि से अनुचित होने पर भी नारी घर की चारदीवारी से बाहर निकलकर आई। इस प्रकार नारी अपने यथार्थ रूप में समाज में सामने आई। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् पारम्परिक वैवाहिक मान्यताओं में परिवर्तन हुआ। अब अन्तर्जातीय विवाह होने लगे हैं। स्वातंत्र्योत्तर परिवेश के परिवर्तित हो जाने के कारण भारतीय परिवार के ढांचे में बहुत बड़ा परिवर्तन आ गया। नई व पुरानी पीढ़ी का संघर्ष उभरने लगा। 'पिता' कहानी में पिता–पुत्र के द्वन्द का चित्रण है। पुरानी पीढ़ी के प्रति आदर और सम्मान के मूल्य लुप्त हो गए तथा बुजुर्गों के प्रति एक आक्रोश का भाव है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त हिन्दी उपन्यासों में अबला, सतीत्व एवं देवीत्व समझी जाने वाली नारी को नये रूप में प्रस्तुत किया गया। स्त्री–पुरुष दोनों को समान अधिकार हुए। स्वच्छन्दता की भावना, व्यक्तिवादी जीवन दर्शन ने संयुक्त परिवार प्रथा को खण्डित कर दिया और मानव को लघु परिवार की ओर अग्रसर किया। अमृतलाल नागर एक मानवतावादी उपन्यासकार है। वे घृणा की जगह स्नेह, पतन की जगह उत्थान और ध्वंस की जगह सर्जन के पक्षपाती है।

अमृतलाल नागर ने 'बूंद और समुद्र' ने दाम्पत्य जीवन का चित्रण करते हुए कहा है ''समाज साला हमारे प्रेम के आगे क्या वस्तु है''[3] बूंद व समुद्र की वन चाहती हुई भी सज्जन का विरोध करते हुए कहती है। विल व प्रेम बड़ी चीज है तो मनुष्य को शरीर भोग की लालसा क्यों होती है''। इस उपन्यास में नागर जी जीवन के यथार्थ का उकेरा है। 'वाटिका' नागर जी का प्रक्रम कहानी संग्रह है। 'प्रायश्चित' और 'तुलना' जैसी कहानियों में आदर्श नारीत्व की कल्पना की है। 'प्रायश्चित' में समाज के सामन्ती संस्कारों पर कटु प्रहार करते हुए नारी कल्याण विधेयात्मक योजना प्रस्तुत की है।

इलाचन्द्र जोशी का नाम हिन्दी जगत में उल्लेखनीय है। नारी मनोविज्ञान का उन्होंने समाज के परिप्रेक्ष्य में उदार और समन्वयवादी चित्रण किया है। 'लज्जा' उपन्यास की लज्जा स्त्रियों के आन्तरिक मनोभावों का प्रतिनिधित्व करती है। इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों का उद्देश्य स्त्री के प्रति परम्परागत पिछड़ी हुई दृष्टि या मध्ययुगीन बोध का खण्डन करके आधुनिक भावबोध की स्थापना करना है। इसलिये जोशी जी ने अपना नारी विषयक दृष्टिकोण विभिन्न रूप में हिन्दी साहित्य में प्रकट किया है। ''यों भी नारी विहीन साहित्य की कल्पना नहीं की जा सकती क्योंकि प्रेमचन्द ने भी स्त्रियों और पुरुषों को इस संसार चक्र को दो समान सहयोगिनी गतियों के रूप में स्वीकार किया है।''[4] 'ऋतु चक्र', 'मुक्तिपथ', 'जिप्सी', 'सुबह के भूले', 'निर्वासित' इनके उल्लेखनीय उपन्यास हैं। इनकी 'सरदार' कहानी में पिता के दुष्कर्मों का परिणाम भोगने वाली संतान अपर्णा की कहानी है। 'थोथे विवाह की पत्नी' में अनमेल विवाह एवं उससे उत्पन्न उलझनें एवं स्त्री के असन्तुलित मानसिक स्थिति की कहानी है। 'परित्यक्ता' कुरूपता के कारण ठुकराई गई पत्नी की कथा है। 'परिणिता', 'बदला', 'रात्रिचर', 'उद्धार' कहानियों में जोशी जी ने स्त्रियों की मानसिकता को उभारा है।

अज्ञेय का 'शेखर एक जीवनी' हिन्दी उपन्यास का कीर्तिस्तंभ बना। 'अपने–अपने अजनबी' उपन्यास के माध्यम से लेखक ने यह संदेश दिया है कि सामाजिक संबंधों के अभाव में मनुष्य एक अजनबी सा बनकर रह जाता है। इस उपन्यास में मानव जीवन और उसकी नियति का मृत्यु से साक्षात्कार के माध्यम से भव्य विवेचन किया है। अज्ञेय की सम्पूर्ण कहानियाँ दो संग्रहों में संग्रहित हैं। 'छोड़ा हुआ रास्ता' और 'लौटती पगडण्डियाँ। अज्ञेय ने प्रेम के लिये सिगनेलर कहानी के पात्र के माध्यम से कहा है, 'मैं प्रेम करता हूँ', और आठ वर्षों से कह रहा है। कितना कच्चा सूत्र है, जो मृत्यु और जीवन का सम्बन्ध जोड़ता है।

डॉ. धर्मवीर भारती का जीवन बोध रोमानी भाव बोध से विकसित होकर यथार्थवाद तथा आदर्शवाद की ओर उन्मुख हुआ है। ''गुनाहों के देवता'' उपन्यास में प्रेम, वासना, अन्तर्द्वन्द, घुटन, दमन, अतृप्ति और कुण्ठा जैसे निषेधमूलक भावों पर अपनी मूल्य चेतना का आरोपण किया है। ''सूरज का सातवां घोड़ा'' उपन्यास में जीवन के प्रति अदम्य निष्ठा अनुप्रणित है।

मोहन–राकेश की रचनाओं में नारी वेदना के चित्र दिखाई देते हैं। राकेश की रचनाओं का प्रिय विषय है पति–पत्नी सम्बन्ध। राकेश जी के 'अंधेरे बन्द कमरे', 'न आने वाला कल', 'अंतराल' तीन उपन्यास हैं। 'न आने

वाला कल' उपन्यास में दाम्पत्य जीवन की ऊब, नीरसता और घुटन का चित्रण है। पति–पत्नी अपने–अपने मानदण्डों से बाहर निकलकर जीना नहीं चाहते। 'मिस पाल' कहानी में मिस पाल के अकेलेपन व हीनभावना की पीड़ा का चित्रण है। 'सीमाएँ', 'फौलादा का आकाश', 'खाली', 'भूखे', 'चौगान', 'कंबल', 'जंगला', 'नन्ही', 'अपरिचित', 'आखिरी सामान' आदि कहानियों में नारी के मानसिक द्वन्द्व, पीड़ा, घुटन, त्रास का चित्रण किया गया है।

फणीश्वरनाथ रेणु ने कथा साहित्य में नये आयाम प्रस्तुत किये हैं। रेणु ने अपने कथा साहित्य में स्त्री जीवन के संघर्ष के साथ–साथ स्त्री मन की कोमलता, प्रतिभा, सांस्कृतिक सम्पन्नता आदि जीवन के तमाम पहलुओं को टटोला है। उदयशंकर भट्ट ने अपने कथा साहित्य में नारी की व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का समर्थन किया है। नारी के प्रति उनका दृष्टिकोण सहानुभूतिपूर्ण है। 'वह जो मैने देखा', 'एक नीड़ दो पंछी', 'नये मोड़', 'लोक–परलोक', 'शेष–अशेष', 'सागर, लहरें और मनुष्य', 'दो अध्याय' इनके प्रमुख उपन्यास हैं। रामदरश मिश्र का 'सूखता हुआ तालाब' में आजादी के बाद के आज के गाँव का यथार्थ अंकित है। जहां न कोई आदर्श रह गया है, न मूल्य, न मान्यता''[6]। 'रात का सफर', में भारतीय नारी के विवाहित जीवन के संघर्षों का अच्छा चित्रण है। स्त्री पर पुरुष के अत्याचारों के विरूद्ध आवाज उठाने पर परित्यक्ता हो जाती है। राजेन्द्र यादव के कथा साहित्य में स्वतन्त्रता दौर की युवा पीढ़ी संघर्ष, स्वप्न बेरोजगारी हताश, आत्महीनता के साथ–साथ जिजीविषा आन्तरिक मनोविश्लेषण का चित्रणा है। 'उखड़े हुए लोग', 'सारा आकाश', 'कुल्टा', 'राह और मात', 'एक इंच मुस्कान', 'अनदेखे अनजाने पुल', 'मंत्रविद्व' आदि इनके बहुचर्चित उपन्यास हैं। राजेन्द्र यादव की कहानियां स्वाधीनता के बाद विघटित हो रहे मानव मूल्यों, स्त्री–पुरुष संबंधों, बदलती हुई सामाजिक और नैतिक परिस्थितियों तथा पैदा हो रही एक नयी विचार दृष्टि को रेखांकित करती है। 'टूटना' कहानी में वर्गीय संस्कारों का द्वन्द्व है। यादव जी की कुछ कहानियों में काम सम्बन्धों के नए सन्दर्भ हैं। मसलन 'प्रतीक्षा' लेस्वनियन टच' लिए हुए है और अधेड़ महिला की ग्रन्थियों को सलीके से खोलती है।'

मैत्रेयी पुष्पा का स्त्री विमर्श में महत्वपूर्ण योगदान है। स्त्री को हजारों साल से गुलाम बनाये रखने वाली पितृसत्ता द्वारा उद्भुत तथाकथित 'महान संस्कृति' के खिलाफ रणभेरी गुंजाती मैत्रेयी पुष्पा के गहन चिंतन लेख संकलित हैं। मैत्रेयी के उपन्यास 'बेतवा बहती रही', 'इदन्नमम्', 'चॉक', 'झूला नट', 'अल्मा कबूतरी', 'अगनपाखी', 'विजन', 'कही ईसुरी काग', 'त्रिया हठ' इनके बेहद प्रशंसित रहे हैं। मृदुला गर्ग का कथा साहित्य जीवनानुभवों पर आधारित है। वे स्त्री को उपभोग की वस्तु नहीं, बल्कि जीवित व्यक्तित्व मानती हैं। उनकी रचना में स्त्री भोग्या नहीं भोक्ता है। मुदृला जी का मानना है कि स्त्री की लड़ाई पुरुष से नहीं, रूढ़िगत मान्यताओं से होनी चाहिए। 'कोई भी पुरुष स्त्री का स्वामी क्यों हो ? और उससे भी वजनदार यह सवाल है कि स्त्री का मूल्य उसके व्यक्तित्व में निहित है या पुरुष से उसके सम्बन्ध में।''[7]

'पचपन खम्भे लाल दीवारें', 'रूकोगी नहीं राधिका', 'शेषयात्रा', 'अन्तर्वंशी', 'भया कबीर उदास', उषा प्रियंवदा जी के आधुनिकता बोध के उपन्यास हैं। मूल्यों का विघटन और खण्डित व्यक्तित्वों का निरूपण उनके उपन्यासों में दिखाई देता है। उनके सभी उपन्यासों के नारी चरित्र सामाजिक परम्पराओं, रूढ़यों और मान्यताओं से परे हैं। 'वापसी', 'जिन्दगी और गुलाब के फूल', 'पैरम्बुलेटर', 'कच्चे धागे', 'दृष्टिदोष', 'कंटीली छांह', 'झूठा दर्पण' विघटित सम्बन्धों की कहानियाँ हैं। ऊषा जी ने कहानियों में स्त्री–पुरुष के प्रेम सम्बन्धों के विविध पक्षों और परिवार की परिवर्तित व्यवस्था का चित्रण सफलतापूर्वक किया है।

मन्नू भण्डारी ने भारतीय समाज में स्त्री की दशा एवं दिशा का मार्मिक चित्रण किया है। मन्नू भण्डारी ने अपने कथा साहित्य में स्त्री के जीवन में पुरुष की अनिवार्यता को स्वीकार करती है। वे स्त्री को पति की सहगामिनी के रूप में देखती हैं, अंधानुगामिनी के रूप में नहीं। ''नारी जीवन में यौन प्रश्नों को लेकर कृष्णा सोबती ने आधुनिक भारतीय पितृसत्तात्मक पारिवारिक–सामाजिक संरचना पर करारा प्रहार किया है।.... इन्होंने नारी समस्या को यौन–संबंधों के दायरे में देखने की कोशिश की है तथा परम्परागत यौन नैतिकता के मानदण्डों को पुरुषों का हिमायती माना है।''[8]

निष्कर्ष

साहित्यकार पुरुष हो या स्त्री महत्व है उसकी सृजनशीलता का परन्तु 'जीवन के रंगमंच' पर प्रत्येक अंक में मुख्य पात्र पुरुष ही होता है, स्त्रियों को प्रधाव्य नहीं दिया जाता, न उसकी मान्यताओं एवं धारणाओं को प्रस्तावित शोध का मुख्य उद्देश्य स्त्री की विभिन्न भूमिकाओं के बारे में मानव समाज को परिचय देना है। जीवन के उन अंधेरे कोनों पर भी प्रकाश डालना है, जिसकी पीड़ा स्त्रियों ने सदियों से झेली है। स्त्री की सबसे बड़ी त्रासदी यही है कि उसकी भूमिका हमेशा जरूरतों को ध्यान में रखकर घर में पुरुष और समाज में व्यवस्था तय करती है। यहीं से आरम्भ होती है स्त्री विमर्श की कथा। स्त्री–विमर्श एक ऐसा विमर्श है, जो वर्ग, जाति, वंश, धर्म, प्रांत और देश आदि मर्यादित सीमाओं के परे है। इस शोध का उद्देश्य चाहे जिस वर्ग, धर्म, प्रांत और देश का स्त्री पीड़ित हो, वह उसका विरोध करता है। आज हमारे यह नारीवादी एक अपरिचित या त्याज्य दृष्टिकोण नहीं, बल्कि एक सार्थक स्वीकृति समग्र दर्शन के रूप में स्वीकार्य हो चला है। इससे प्रतिबद्धता से जुड़े सभी जनों को ईमानदारी और तटस्थता से इस विचारधारा में आ बैठी इन तमाम विकृतियों एवं कमजोरियों के परिमार्जन के बारे में सोचना होगा। इस शोध का उद्देश्य एक समग्र दृष्टिकोण है, जो संवेदनशील और मानवीय दृष्टिकोण विकसित करके उसके उजास में उन्हें पूरे समाज के शोषित और प्रवंचित तबकों समझाने की क्षमता देता है। साथ ही उनके प्रति एक तरह का सदयता तथा कर्मठ दायित्व बोध भी जगता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *साठोत्तरी हिन्दी लेखिकाओं की कहानियों में नारी–मंगल कप्पीकेरे, पृ. 14*
2. *डॉ. मंजुला गुप्ता, हिन्दी उपन्यास, समाज और व्यक्ति का द्वन्द्व, पृ. 225*
3. *अमृत लाल नागर, बूँद और समुद्र, पृ. 273*
4. *प्रेमचन्द के नारी पात्र, डॉ. सिंह, पृ. 71*
5. *सिगनेलर, अज्ञेय, पृ. 323*
6. *डॉ. वी.पी. चौहान, रामदरश मिश्र के कथा साहित्य में ग्राम्य जीवन,*
   पृ. 12, सं. 2004
7. *मुदुला गर्ग, चुकते नहीं सवाल, पृ. 74*
8. *डॉ. ओम प्रकाश शर्मा, समकालीन महिला लेखन, पृ. 148*